बांग्ला का बाउल और भाटियाली लोक संगीत

जमुना देबनाथ

लोक द्वारा रचित, लोक के लिए रचा गया और लोक में प्रचलित गीत ही लोकगीत कहलाता है। इसकी भावना समाज के हर एक व्यक्ति की अपनी निजी भावना है। जिसे वह महसूस करता है लेकिन शब्दों और सुरों के अभाव के कारण अभिव्यक्त नहीं कर पाता। इन गीतों के रचनाकारों ने शास्त्रीय नियमों की परवाह न करते हुए सहजता से लोगों के उपयोग में लाने के लिए इसे शब्दों, छंदों और सुरों की आनंद-माला में पिरोया, वही लोक संगीत कहलाया।

बांग्ला के लोक संगीत की बात की जाए तो हमें इसकी बहुत सारी शाखाएँ एवं उपशाखाएँ उपलब्ध मिलती हैं। जिसका एक-एक विषय अपने आप में असीम इतिहास और उपलब्धियों को समेटा हुआ है। जैसे- बाउल गीत, भाटियाली गीत, झूमूर, लालोन गीत, बादाई, गाजोन, मनसा कथा, मुसलमान समाज के विवाह गीत आदि। इनमें बाउल, भाटियाली का खूब प्रचलन है।

बाउल गीत:- कहते हैं कि 'बाउल' शब्द अंग्रेज़ी के 'बायोस' या हिंदी में कहें तो 'वायु' शब्द से उत्पन्न हुआ है। हवा जिसे हम किसी फ्रेम में फिट करके नहीं रख सकते। बाउल आचार-अनुष्ठानहीन होते हैं। यह एक संप्रदाय है। जिस पर यह नाम बाहर से आरोपित किया गया है। उनके व्यवहार एवं गीतों के मूड को देखकर लोगों ने उनका नाम 'बातूल' या 'बाउल' रख दिया। देखा जाए तो उनका कोई इतिहास नहीं मिलता केवल रचनाएँ मिलती हैं। जो लोगों की ज़ुबान पर आज भी ज़िन्दा हैं। वे केवल अपने मन में उठने वाले विचारों को बड़ी सत्यता से गीतों के माध्यम से अभिव्यक्त करते रहे हैं, जिनमें उनका जीवन दर्शन होता है। उनके गीतों के केंद्र में कर्म नहीं मर्म होता है। किस प्रकार इन गीतों को गाने वाले लोगों को कब से और किसने 'बाउल' नाम दिया, यह रहस्य ही है। इन गीतों के आविर्भाव काल का निर्धारण करना भी अअसंभव है। क्योंकि प्राचीन बाँग्ला साहित्य की अन्य शाखाओं की तरह इनका कोई लिखित इतिहास उपलब्ध नहीं होता है। संभव है कि विभिन्न कालों में लोगों के द्वारा इन गीतों के गायन से इसकी भाषा एवं रूप में परिवर्तन होता गया एवं इसकी भाषा का प्राचीन रूप धीरे-धीरे लुप्त हो गया। बाउल गीत की अब जो भाषा है, उसमें आधुनिकता की झलक साफ़ नज़र आती है।

बाउल गीतों की एक बड़ी विशेषता है कि इन गीतों में मुख्य रूप से ईश्वर और कहीं-कहीं पर गुरु की साधना का भाव कूट-कूट कर भरा है। ये अपने गीतों के माध्यम से ईश्वर भक्ति में इस प्रकार लीन हो जाते हैं कि इन्हें 'बाउल पागल' भी कहते हैं। बाउल का दूसरा रूप 'भाट' होता है। जो राजस्थान एवं मध्य प्रदेश में पाये जाते हैं। उत्तर प्रदेश में 'बाउल' को फ़कीर या जोगी आदि भी कहा जाता है। सामान्य तौर पर फ़कीर, दरबेस, भाट, साई, जोगी आदि 'बाउल' के ही रूप हैं। रामकृष्ण परमहंस जी ने कहा था- " बाउलेर दौल हौठात एलो,

नाचले,गान गाइले, आबार हौठात चोले गेले। एलो-गेलो, केओ चिनले ना।"(बांग्ला संगीत मेला, सौमित्र लाहिरी, पृ.- 134)

बाउल किसी भी धर्म का हो सकता है। वे विश्व व्यापी हैं। बाउलों का रहन-सहन वैष्णवों से मिलता जुलता है। वे साधारण जीवन व्यतीत करते हैं। उनका पहनावा भी सादा होता है। सफ़ेद धोती एवं गेरुआ रंग का कुर्ता और पगड़ी। वे जगह-जगह जाकर भगवान की भक्ति में लीन होकर गीत गाकर भिक्षा माँगते हैं। वे एक या दो दिन से ज्यादा किसी जगह पर नहीं रुकते। बाउल ज्यादातर वैष्णव मत के होते हैं। वे अपने साथ खंजनी, करताल, गुब्गुबी आदि वाद्य यंत्र साथ लेकर चलते हैं। कहीं पर 'खौल'/ खोल (वाद्य यंत्र) बजाकर भी भिक्षा माँगते हैं। ईश्वर भक्ति में लीन रहना और मानवता की भलाई ही उनका मूल मंत्र है। उन्हें धन-दौलत, मोह-माया से कोई लेना देना नहीं।

लालोन फकीर का एक सुप्रसिद्ध गीत है:-

"मिलोन होबे कोतो दीने.....आमार मोनेर मानूषेरो शोने....।"

इस गीत में बाउल ईश्वर से अपने मिलन की बात करता है। इसके अलावा और एक प्रसिद्ध गीत का बोल है:-

"ओई पीरीती काँठालेर आठा, ओ आठा लागले पोरे छाड़बे ना...
गोले-माले, गोले-माले पीरित कोरो ना....."

इस गीत में बाउल प्रेम से दूर रहने के लिए अथवा यह कह सकते हैं कि प्रेम ना करने की सलाह दे रहे हैं। क्योंकि ये प्रेम ही तो है जो हमें जगत के बंधनों में बाँध देता है और हम मोह-माया के पुजारी हो जाते हैं।

भाटियाली गीत:- बांग्ला लोक संगीत को मुख्य तौर पर दो भागों में बाँट सकते हैं। प्रथम भाग में उत्सव, त्योहार एवं अनुष्ठानों आदि में गाया जाने वाला गीत, जो अधिकतर समूहों में गाया जाता है और उस गीत का क्रिया के साथ संबंध होता है, इसलिए उसे 'शारी गीत' कहते हैं।

दूसरा गीत वह है जब व्यक्ति तनहाई में बिना किसी कर्म में युक्त हुए अपने लिए गाता है। अकेलापन जब उसे आगोश में ले रहा होता है। तब उसके हृदय से जो उद्गार निकलते हैं, उस गीत को 'भाटियाली' गीत कह सकते हैं।

भाटियाली गीत का मुख्य विषय लौकिक प्रेम है। नवयुवक जब इस गीत को गाता है; उसमें उसके प्रणय-जीवन की आशा-निराशा ध्वनित होती है। वृद्ध व्यक्ति के गीत में आध्यात्मिक जीवन की आशा-निराशा ध्वनित होती है। इन गीतों में आंतरिकता बहुत मात्रा में व्याप्त है। अकेले तनहाई में गीत गाने वाले के अन्तर्मन में विरह जागता है और कुछ इस प्रकार प्रस्फुटित होता है:-

" पाखी, तोमार पाये धोरी मिनोति गो कोरी
आर आमाए जालाइयों ना।
'बोउ कौथा कोउ'- बोले गो डाइको ना।।

पाखी डाके शोन्धा काले,
आमी शोन्धा दीते जाई गो भूले; जोदी डाके नीशीकाले
आमी काईन्दा भिजाई बिछाना।।"

भाटियाली गीत प्रधान रूप से विरह-वेदना और निराशा का गीत है। यह विरह-वेदना जिस प्रकार प्रणय-प्रेम संबंधित हो सकता है; उसी प्रकार आध्यात्मिक जीवन की असंपूर्णता से युक्त भी हो सकता है। चूंकि ऐसा माना जाता है कि भाटियाली गीत की उत्पत्ति बांग्ला देश में हुई है और वह एक नदी प्रधान देश है। इस कारण ज्यादातर इसे माँझी-मलहार का गीत या ग्वालों का गीत भी कहा जाता है। पूर्व-बंगाल से माँझी पश्चिम बंगाल में जीविकार्जन के लिए यातायात करते हैं। उन्हीं के जरिये यह गीत पश्चिम बंगाल में प्रचारित हुआ। इन गीतों में किसी प्रकार के ताल, नृत्य या वाद्ययंत्र का उपयोग नहीं किया जाता है। इसमें सुरों को प्रधानता दी जाती है।

भाटियाली गीत कितना प्राचीन है इसका पता लगाना आज के समय में असंभव है। बांग्ला साहित्य के इतिहास का एक प्राचीन ग्रंथ स्वर्गीय हरिप्रसाद शास्त्री द्वारा संपादित 'बौद्धगान उ दोहा' है। इसे करीबन बारहवीं शताब्दी पूर्व संकलित किया गया था, जिसमें सैंतालीस गीतों का उनके रागों के साथ उल्लेख मिलता है। जिसके रचयिता 'भूसुक' थे। जो पूर्व बंगाल के आदिवासी थे। इन गीतों में भाषा का प्राचीन रूप मिलता है:-

"शोहोज मोहातोरु फ़ोरिओ ए तेलो ए।
खोशोम शोभाबे रे बाँधेइ का को ए।।
जिम जोले पानीआ टोलिया भेउ न जाई।
तिम मोनो नोअना रे शोमोरोशे गोओनो शोमाई।।"

आधुनिक बांग्ला भाषा में इसका यदि अनुवाद किया जाए:-

"शोहोजो मोहातोरु स्फ़ूरितो ए त्रिलोके।
ख-शोमो शोभाबे रे बाँधे काहाके ए ?
जेमोन जोले पानी ढालिया भेद कोरा जाए ना।
तैमोन मोनोरोत्नो रे शोमोरोशे गोगोने शोमाए।।"

रचना की दृष्टि से भाटियाली गीत नितांत सरल एवं संक्षिप्त है। बांग्ला के लोक-संगीत में यह रचना संक्षिप्ततम है। इसका कारण शब्दों के स्थान पर सुरों को प्राथमिकता दिया जाना है। इन गीतों में शब्दों की अधिकता ज़रूरी नहीं। निम्नलिखित रचना भाटियाली गीत का एक आदर्श उदाहरण है:-

"ओ शूबोल रे, गूनेर भाई रे शूबोल,
आमार शीघ्र एने दैखा, रे शूबोल, ब्रोजेश्वरी राधा।
हस्त दिये दैख रे शूबोल आमार हृदोय,

बिना काष्ठे जोल्छे ओनोल आमार ओंतोरे।"

रवीन्द्रनाथ जी जब अपनी ज़मीदारी देखने खेत-खलिहानों में निकलते थे, तब वहाँ के कृषक और माँझी-मल्हारों से भाटियाली गीत सुनते थे एवं इस दौरान उन्होंने भी कुछ भाटियाली गीतों की रचना की है। जिसमें उन्होंने एक नया प्रयोग 'देशभक्ति' का किया था-

"आमार शोनार बांग्ला, आमी तोमाए भालोबाशी।
चिरोदिन तोमार आकाश, तोमार बाताश, आमार प्राने बाजाए बाँशी।।"

डॉ. आशुतोष भट्टाचार्य के अनुसार 'भाटि' अंचल वर्तमान बांग्लादेश के मयमन सिंह, कुमुइल्ला, सिलेट एवं ढाका को मानते हैं। इन क्षेत्रों के माँझी-मल्हारों के कंठ से जो गीत निकलता है- वही भाटियाली है। डॉ. अश्रफ़ सिद्दीकी के अनुसार नदी के बीच से नावों पर बैठकर जब माँझीगण जो गीत गाते जाते हैं, वह गीत भाटियाली कहलाता है। भाटियाली गीतों में नदी को जीवन के स्रोत के रूप में चित्रित किया गया है। इन गीतों में नदी और जीवन स्रोत का अपूर्व समन्वय मिलता है।

सही में भाटियाली गीतों के निर्माताओं के मन में नदी की धारा जीवंत थी। जो हमारी जीवन धारा की तरह गतिमान है। कभी लगता है कि इन गीतों में मानव जीवन का विषाद छुपा है। दुख की एक करुण आवाज जो अकेले में नदी के बहते पानी को देखकर निकलती है। फिर वह विषाद नदी की धारा में बहकर खो जाता है।

अब बाउल और भाटियाली गीतों का हिंदी एवं अन्य भाषाओं में अनुवाद हो रहा है। इसकी प्रसिद्धि तो पहले ही थी। परंतु अब इसे देश-विदेश के कोने-कोने में विस्तार मिल रहा है, साथ ही इसके सुनने वालों की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। आजकल इसमें अन्य गीतों का मिश्रण कर एक नया रूप देकर आधुनिक गायक नये ढंग से प्रस्तुत कर रहे हैं। पहले इन गीतों को वयस्क लोग ही अधिकतर सुनते थे और अपने जीवन के साथ जोड़कर उसे प्रासंगिक बनाते थे। परंतु इन गीतों में नये बदलाव होने के कारण इसका नया रूप अब युवक-युवतियों को भी भा रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

1. बांग्ला संगीत मेला, संपादक: सौमित्र लाहिरी, गीता प्रिंटर्स
2. बाउल कवि लालन शाह: साधना और साहित्य, रामेश्वर मिश्र, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली

*(**लेखकीय परिचय:** जमुना देबनाथ त्रिपुरा की चर्चित लोक कलाकार हैं। वर्तमान में त्रिपुरा प्रांत में अध्यापन कार्य से संबद्ध हैं।)*